मुनि आहार - वृत्ति परिसंख्यान तप

*** मुनिश्री प्रमाणसागरजी महाराज * साभार – जैन प्रचारक ***

मुनि आहार के लिए जो नियम होते हैं, जिसे विधि कहते हैं, यह वृत्ति परिसंख्यान है । इसका शास्त्रीय नाम है – अभिग्रह। भोजन आहार संबंधी अभिग्रह को ही वृत्ति परिसंख्यान कहते है। बहुत से लोग आहार देना चाहते हैं, चौके लगाते हैं। किसी व्यक्ति विशेष के प्रति आहारदाता के प्रति लगाव, आसक्ति न हो इसलिए यह वृत्ति परिसंख्यान का नियम लिया जाता है, कठिन से कठिनतम नियम मुनिगण लेते हैं । भगवान महावीर का चंदनबाला के यहां आहार दस माह के उपरांत हुआ था । आचार्य शांतिसागर महाराज ने भी ऐसे नियम लिये कि उन्हें छत्तीस दिनों के बाद आहार मिला। यह अलग अनुभव है ।

आहार मिले तो ठीक, न मिले तो ठीक यह आशा, आकांक्षा पर विजय का मार्ग है । वृत्ति परिसंख्यान में चार प्रकार की वृत्ति होती है। भोजन की वृत्ति, पात्र की वृति (नियम) होती हैं – आज अमुक प्रकार के दाता के यहां जायेगे वे इस प्रकार खड़ो हों तो आहार लेंगे अन्यथा नहीं, विधि मिल जाये तो ठीक, आज अमुक पात्र में आहार दिखाया गया तो ग्रहण करेंगे। आहार तो कर पात्र में ही लेना है लेकिन सोच लिया आज स्वर्ण थाल में आहार दिखाया गया तो ही ग्रहण करेंगे । स्वर्ण से कोई आसक्ति नहीं है लेकिन यह नियम भी अपनी पुण्य की परीक्षा और आशा पर जय के लिए होता है ।

एक बार हमने नियम लिया कि आज चांदी के पात्र में नहीं लेंगे, अस्वस्थता चल रही थी, साथ में एक ब्रह्मचारीजी थे, उन्होंने हमारे लिए औषधि चांदी की कटोरी में घोल रखी थी, चांदी के पात्र में नहीं लेना, चले आये, यह पात्र की वृत्ति है । आहार में इनते प्रकार की ही सामग्री लेंगे, यह भोजन की वृत्ति है। कभी कभी मुनि किसी श्रावक विशेष का नियम भी लेते हैं।

एक नगर में एक श्रावक प्रतिदिन चौका लगाते पर हमारी विधि नहीं मिल रही थी । उनकी बहुत श्रद्धा थी, पर आहार उनके यहां नहीं हो पा रहा था। एक दिन हमने नियम लिया कि आज उन्हीं के यहाँ जायेंगे, उनके यहां तक गये, पर वे नदारत, लौटकर मंदिर आ गये, बाद में पता चला वो बाहर चले गये थे । उनका यहां चौका ही नहीं लगा, यह वृत्ति परिसंख्यान का तप है ।

करणानुयोग के ग्रंथो में वास्तु-विद्या

वास्तु कला का आरम्भ वास्तु की प्राचीनता को प्रदर्शित करता है । वास्तु का प्रारंभ तो कर्मभूमि के प्रारंभ में प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ देवजी के उपदेशों से ही हो गया था। उन्होंने मानव की आजीविका के लिए जो षट्कर्मों का उपदेश दिया उनमें एक शिल्प कर्म भी है। इसी से हमें प्राचीन शिल्प कला के वैभव की जानकारी मिलती है। भरत चक्रवर्ती के 96 खण्ड के महल हुआ करते थे। 96 खण्ड के महले बनावट दिशायें स्थिति सभी कुछ वास्तु विषयक उच्चकोटि का ज्ञान का परिणाम था। आज हमारे पास वैसा ज्ञान नहीं है पर हमारा साहित्य, आगम के द्वारा हमे आज भी सही दिशा निर्देश मिल जाते है। जैसे कि भूमि का चयन करने के लिए प्राचीन जैन सिद्धांतों के अनुसार गज, कर्म, दैत्य, नाग, पृष्ठ भूमियों के भेद विभिन्न दिशाओं में चढ़ाव एवं उतार की अपेक्षा से लिया जाना चाहिए । जैन पुराणों तथा करणानुयोग के कई ग्रंथों में वास्तु विद्या और शिल्प शास्त्र पर विशद रूप से प्रकाश डाला गया है।

करणानुपयोग का प्राचीन किन्तु अनउपलब्ध ग्रंथ है । ''लोय विभाग'' जिसका संस्कृत रूपांतर ''लोक-विभाग'' के ही नाम से भूमि सिंह सूरि (लगभग 11वीं सदी) में किया था । उन्होंने लिखा है कि मूल ''लोक विभगा'' की रचना पल्लववंशी कांची नरेश सिंह वर्मा के शासनकाल में शक सवत् 380 (302 ई.) में मुनि सर्वनन्दी ने पाटलिंक नामक ग्राम में की थी, परन्तु यह ग्रंथ इससे भी पूर्व रहा प्रतीत होता है। क्योंकि ''लोय विभाग'' का उल्लेख ''तिलोयपण्णत्ती'' (176 ई.) में कई बार हुआ है । ''नियम सार'' की सत्रहवीं गाथा में संदर्भित ''लोय विभाग'' यही ग्रंथ माना जाए तो उसका रचनाकाल आचार्य कुन्द कुन्द (52 ई.पू. से 48 ई. तक) से पूर्व का मानना होगा ।

एक और अनुपलब्ध ग्रंथ है । ''ज्योतिष्करण्डुक'' जो कि सूर्य प्रज्ञाप्ति नामक प्राचीन ग्रंथ पर आधारित है । जिस पर आचार्य पादलिप्त सूरि (5वीं सदी) की 'प्रकरण' टीका तथा आचार्य मलयगिरि की टीका उपलब्ध है।

उपलब्ध ग्रंथों में सर्वाधिक विस्तृत और सूचना प्रधान ग्रंथ है आचार्य यतिवृषभ का ''तिलोयपण्णत्ती'' जिसका अनुसरण अनेक आचार्यो ने किया है । उसमें अनेक नगरियों के विस्तृत विवरण है । आवास गृह, जलाशय, बाजार, परकोटा, प्रवेशद्वार, राजभवन गुफा, स्तूप, मंदिर, मानस्तंभ, मेरु आदि की लंबाई-चौड़ाई, ऊंचाई गहराई, नाप जोख आदि के विषय में विस्तार से चर्चा की गयी है । तीर्थंकर के समवशरण का वर्णन तो और भी विस्तार से किया गया है जो कि वास्तु कला का सबसे उत्कृष्ट ज्ञान व उपयोग है । आचार्य नेमीचन्द्र सिद्धांत चक्रवर्ती का त्रिलोकसागर (11वीं सदी) आचार्य पद्मनन्दि का ''जंबूद्वीपपण्णत्ती'' आदि ग्रंथ भी उल्लेखनीय है ।

इसके अतिरिक्त भी कुछ उल्लेखनीय ग्रंथ है । औपपातिक सूत्र, जीवा जीवाभगव ''सूर्यप्रज्ञाप्ति जम्बूद्वीपप्रज्ञाप्ति चन्द्रप्रज्ञाप्ति, जिनमद्र गणी का ''क्षेत्र समास'' और संग्रहणी' बृहत क्षेत्र समास त्रैलोक्य – दीपिका चन्द्रसूरी (12वीं सदी) द्वारा संकलित ''बृहत संग्रहवी प्रद्युम्न सूरि (13वीं सदी) का ''विचारसार-प्रकरण'' रत्न-शेखर सूरि (14वीं सदी) का ''धधुक्षेत्र समास सोमतिलक सूरि (14वीं सदी) का बृहत-क्षेत्र समास आदि ।

स्वतंत्र रूप से हमें केाई ग्रंथ नहीं मिलता पर प्रतिष्ठा ग्रंथ के एक अंश के रूप में या फिर वास्तु विद्या और मूर्ति कला पर संयुक्त ग्रंथ के रूप में लगभग तेरहवी सदी से वास्तु कला पर लिखित रूप मिलता है । 1228ई. में लिखे गये पं. आशाघटजी का ''प्रतिष्ठा-सारोद्धार'' में हमें मूर्ति-प्रतिष्ठा के माध्यम से वास्तु विद्या का विधान मिलता है। इसी क्रम में ठक्कुर फेरूजी का वास्तु-विद्या पर स्वतंत्र और सांगोपांगरूप से वर्णन करने वाला एक मात्र प्रकाशित जैन ग्रंथ है । ''वत्थु सार-पयरण''। वास्तु विद्या पर पुराण-साहित्य का योगदान भी महत्वपूर्ण रहा है । जैसे जिन सेन आचार्य ने हरिवंशपुराण में वास्तु विषयक ज्ञान मिलता है । इसके अलावा आचार्य (10वीं सदी) का अपभ्रंश ''महापुराण'' आचार्य हेमचन्द्र सूरी (12वीं सदी) का प्राकृत ''तिसद्धिमहापुरिस-गुणालंकार'', आचार्य कल्प पंडित आशाधर (13वीं सदी) का ''त्रिषाष्टि श्लाकापुरूष चरित'' आदि-आदि ग्रंथो में हमें स्थापत्य कला (वास्तु कला) का विस्तृत वर्णन मिलता है । आचार्य उमास्वामी के नाम से प्रचलित एक श्रावकाचार ग्रंथ में भी लिखा है कि घर की किस दिशा में कौन सा कक्ष हो ।

''जैन वास्तु-विद्या'' लेखक डॉ. गोपीलाल ''अमर'' जी ने अपनी पुस्तक में जैन वास्तु विद्या का बढ़ा ही सुंदर सटीक वर्णन किया है ।

मुनिश्री 108 देवनन्दिजी महाराज ने ''वास्तु-चिन्तामणि'' नामक ग्रंथ लिखकर जैन समाज पर बड़ा ही उपकार किया है । इसी ग्रंथ का अध्ययन करने के बाद मेरे मन में ये जिज्ञासा जागी कि मैं भी जैन वास्तु विद्या पर शोध कार्य करूँ, उसी के परिणामस्वरुप ये तथ्य सामने आये कि गृह निर्माण वाला में कब कैसे, कहाँ, क्या बनना चाहिए इसका बड़ा रोचक व सही ज्ञान हमारे आचार्य हमें दे गये है । आवश्यकता है सिर्फ शोध कार्य की ।

– श्रीमती निधि जैन, 'तारबाबू' – जबलपुर

सूचना-

गोलालारीय दर्शन पत्रिका की ओर से प्रतिभाशाली विद्यार्थियों को प्रशस्ति पत्र भेजे जाते रहे है जो क्षमावाणी के पूर्व आपको या आपके नगर में पत्रिका प्रतिनिधि तक पहुंचा दिये जावेंगे । हमारे आगामी अंक में आपके नगर में आयोजित प्रतिभा सम्मान समारोह के समाचार प्रमुखता से प्रकाशित किये जावेगे । अत: कार्यक्रम की जानकारी मय फोटो 15 अक्टूबर 2015 तक अवश्य भेंजे ।

इन्दौर गोलालारीय समाज की बहुआयामी पारिवारिक पुस्तिका 'प्रयास' के प्रकाशन का कार्य प्रगति पर है । इस पुस्तिका में मालवा एवं निमाड़ क्षेत्र में निवासरत गोलालारीय परिवार की जानकारी प्रकाशित की जाना है । इन्दौर के बाहर (मालवा एवं निमाड़ क्षेत्र) के जिन परिवारों ने जनगणना फार्म जमा नहीं कराये है वे 20 अक्टूबर तक अपने फार्म जमा करावें एवं जिन परिवारों को फार्म प्राप्त नहीं हुए है वे 9329524227, 9425903301, 9424013136 पर संपर्क कर फार्म प्राप्त कर सकते है । विशेष – नगर में अध्ययनरत/नौकरी/व्यवसाय कर रहे एकल व्यक्ति भी अपनी जानकारी अवश्य देवें । समाजजनों से सादर अनुरोध है कि वे इस सूचना की जानकारी शहर में आये नवीन परिवारों या शिक्षारत विद्यार्थियों को अवश्य देवें ।